Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Drawing
Research Link - 131, Vol - XIII (12), February - 2015, Page No. 102-103
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2014 - 1.8007

भारतीय लघुचित्र शैली में संगीत का मूर्त स्वरुप

प्रस्तुत शोधपत्र, भारतीय लघुचित्र शैली में संगीत के मूर्त स्वरुप का अध्ययन पर आधारित है। भारतीय लघुचित्र शैली में चित्रकारों ने राग-रागिनियों के प्रदर्शन में परंपरागत शास्त्रीय एवं लोक नियमों के आधार पर विविध आश्रयों का सहारा लेकर बड़ी ही एकाग्रता एवं भावुकता से चित्रों को हृदयग्राही बनाया है। मध्यकालीन लघुचित्र परंपरा में रीतिकालीन काव्य एवं साहित्य का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है, परंतु रागमाला चित्रण में संगीत के व्यवहारिक और सैद्धांतिक तर्कों को रेखाओं, रंगों और प्रतीकों के द्वारा राग-रागिनियों को मूर्त रुप दिया है। ये तो सिर्फ भारतीय चित्रकार हैं, जिन्होंने श्रव्य को दृश्य रुप में सृजित कर कला-संसार को अचंभित कर दिया।

डॉ.रीना सिंह

मानव जीवन में जितनी भी कलाएँ हैं, चाहे वह चित्रकला हो संगीत या साहित्य, ये सभी सृजनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम है। कला का मूल उद्देश्य ही अभिव्यक्ति है और सभी कलाओं का मूल सौन्दर्य भाव एवं रस हैं। संगीत स्वर, कविता शब्दों और चित्र रंग व रेखाओं के माध्यम से भावभिव्यक्ति करता है, इस तरह से एक कला दूसरी कला का विस्तार करती है, तथा एक दूसरे में परिवर्तित होकर अद्वितीय सजृन करती है। इस का उत्कृष्ट उदाहरण भारतीय लघु चित्र शैली में संगीत और चित्रकला के अन्तसम्बन्धों की अद्भूत मिसाल है। यहाँ के चित्रकारों ने बड़े ही मनोवेग से संगीत के मर्म और रस के साथ प्रतीकात्मक रंगों और रूपाकारों से रूपांकित किया है। रागों की बानगी, अतंध्वनि तथा स्वरों और भाब्दों के बोध रूप एवं रागाधारित चित्रों का नामकरण रागमाला चित्रों में हमें सांगीतिक अनुभव से जोड़ता है।''[1]

नाट्यशास्त्र में संगीत पर विस्तृत वर्णन है, परन्तु राग–रागनी पर विवेचन प्राप्त नहीं है। संगीत के क्षेत्र में राग शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम मतंग की बृहत्देशी में ही मिलता है।''[2] तथा इनका रचनात्मक काल भरत के नाट्यशास्त्र और नारद के संगीत मकरंद के बीच माना जाता है।''[3] रागनी शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख पंचमसार संहिता में प्राप्त होता है। इतिहासकार सातवीं से ग्यारहवी शताब्दी के बीच रचित इस रचना में पुरूष को (मुख्य राग) और प्रत्येक की छह स्त्री (अधीन राग) रागों के परिवार का वर्णन है। उपरोक्त वर्गीकरण में कुछ स्वाभाविक रागों के लिए नपुंसक शब्द का भी प्रयोग किया गया है।[4] इसी प्रकार सोमेश्वर द्वारा रचित मानसोल्लास या अभिलाषितार्थ चिन्तामणि में शुद्ध भिन्न व गौण रागों का उल्लेख हमें प्राप्त होता है, ग्यारहवी सदी की नान्यदेव सरस्वती साहित्यालंकार की रचना में मूलराग, स्वरिख्य राग तथा देशख्य राग आदि का वर्णन मिलता है। सारंगदेव द्वारा रचित संगीत रत्नाकर में रागमाला परम्परा में पुत्र रागों का नामकरण भी हुआ है। राग–रागनी से उपजी नई राग इसी श्रेणी के हैं।[5] यद्यपि इन रागों की प्रस्तुति का समय तथा ऋतु का निर्देश भी संगीत ग्रन्थों में मिलता है, किन्तु रागों का मानवीयकरण ब्रजभाषा के कवियों ने किया और इसका मुख्य आधार भक्ति–आन्दोलन रहा। ब्रज में वैष्णव सम्प्रदायों के उत्कर्ष का प्रमुख काल मध्य युग माना जाता है। भारत में मुगल शासन के अन्तर्गत अकबर के शासन काल में राजदरबार में शास्त्रीय संगीत को पर्याप्त प्रश्रय मिल रहा था, उसी समय ब्रज के देवालयों में भक्ति संगीत के माध्यम से शास्त्रीय संगीत पल्लवित हो रहा था।''[6] कृष्ण की राग–प्रधान सगुणों उपासना के प्रभाव से संगीत–शास्त्रियों तथा गायकों में यह विश्वास उत्पन्न हुआ कि प्रत्येक राग अथवा रागिनी का दैवी स्वरूप भी है।''[7] अतः जिस प्रकार भक्ति मार्ग में उपासना के हेतु विभिन्न ध्यान मन्त्रों और तदनुसार चित्रों की रचना हुई उसी प्रकार संगीत के देवी–देवताओं के भी ध्यान निश्चित किए गए। जिस वातावरण में किसी राग–रागनी की प्रतीक भावना का उदय होता है, उसकी कल्पना कर प्रत्येक राग–रागनी को मूर्त रूप देने की चेष्टा में कवियों ने संस्कृत अथवा ब्रजभाषा में पद्य सृष्टि की।''[8] अतः अधिकांशतः ये चित्र भी उन्हीं स्थानों पर सृजित हुए जहाँ वैष्णव–भक्ति तथा काव्य का प्रबल प्रभाव था। राजस्थान मालवा तथा बुन्देलखण्ड में इसका विशेष विकास हुआ।

चित्रकारों ने 6 प्रमुख राग व प्रत्येक राग की पाँच रागिनियों को मूल रूप में सृजित किया, जो इस प्रकार है :

(1) राग भैरव : रागिनियाँ भैरवी, वैराड़ी, मधुमाधवी, सिन्धवी, बंगाली। **(2) राग मालकंस :** रागिनियाँ टोडी, गौडी, गुणकली, खम्भावती। **(3) राग हिन्डोल :** रागिनियाँ रामकली, देशश्री, ललित, बिलावल, पटमंजरी। **(4) राग दीपक :** रागिनियाँ देशी, कामोद, नट, केदार, कान्हारा। **(5) राग श्री :** रागिनियाँ मालवश्री, असावरी, धनश्री, वसंत, मारू। **(6) राग मेघ :** रागिनियाँ गुर्जरी, मल्हारिका, भूपाली, टणका, देशकारी।''[9]

चित्रकारों ने इन राग–रागिनियों को उचित प्रतीकों विविध भावों एवं रमणीय रंग के संयोजन से हृदयग्राही दृश्य प्रस्तुत किया है। भारतीय लघु चित्रों में, राग एवं रागिनियों की कल्पना नायक एवं नायिका के रूप में की गयी। इस समय वैष्णव धर्म अपने पूरे यौवन पर था। श्रीकृष्णा तो जितना जनमानस के प्रिय रहे उतना ही श्रद्वेय शासकों के लिए भी रहा।

सहायक प्राध्यापक (चित्रकला विभाग), डी.एस.बी.परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड)

अतः इस समय काव्य संगीत व चित्रकला में नायक के रूप में कृष्ण व नायिका राधा के रूप में सर्वाधिक चित्रित किया गया।

चित्रकारों ने विविध प्रतीकों का आश्रय लेकर श्रृंगार रस को दृश्यमान किया है, श्रृंगार के दो भेद किए गए हैं, (1) संयोग श्रृंगार (2) वियोग श्रृंगार। रागमाला में सर्वाधिक चित्रण प्राप्त हैं, वह वियोग श्रृंगार। इस भाव के अन्तर्गत प्रणय–संदेश की प्रतीक्षा में कमल की पंखुरियाँ चुनती हुई (माल श्री), पति का रूपचित्र अंकित करती (धन श्री), वन में भटकती हिरणों से घिरी (टोड़ी), पति के सुरक्षित लौटने की कामना से शिव की अराधना में लीन (भैरवी), पर्वत सदृश्य तपस्विनी बनी नायिका (देव गांधार) आदि वियोग के क्षणों को प्रकट करती है।''[10] यद्यपि रागमाला चित्रों में वियोग श्रृंगार की अभिव्यक्ति करना अधिक रूचिकर लगा, परन्तु उन्होंने संयोग श्रृंगार के अंकन में भी संकोच नहीं किया। उनकी संयोगवस्था का अंकन निश्छल हैं नृत्य करके पति को रिझाती (बसन्त, मेघ, मल्हार) हिण्डोले पर झूल कर हिण्डोला संगीत गोष्ठी का आयोजन (श्री मालकौश), प्रणय की पर्व की तैयारी (वैरागी, मालवी, दीपक) और पुनर्मिलन तथा उषाकाल का आगमन एवं रति–क्रीड़ा का अंत (विभास) संयोग श्रृंगार में परिलक्षित होता है।''[11]

रागमाला का प्राचीनतम चित्र प्रमाण कल्पसूत्र रागमाला (पश्चिमी भारत) है, जो 1475 ई0 में बना। पण्डुलिपि रूप में यह गुजरात या अवभ्रंश, शैली में निर्मित है, इसके एक पृष्ठ पर 10 रागचित्र बने हुए हैं, ऊपर पाँच राग यथा श्री, वसन्त, भैरव, पंचम तथा मेघ एवं नीचे रागिनियों क्रमश द्रविड़ी भाषा, रामगिरी भाषा अमीरी एवं दबाला है। चित्रों में सवा चश्म चेहरे हैं, जिनमें नीले, लाल, श्वेत एवं स्वर्ण रंग अपने मूल रूप में तथा गुलाबी हंस एवं पीला आदि रंग प्रयुक्त हुए है।''[12]

राजस्थानी रागमाला चित्रों के स्पष्ट उदाहरण मेवाड़ शैली के प्राप्त होते हैं, प्रसिद्ध चित्रकार नसीरदीन द्वारा चांवड में चित्रित रागमाला का सैट चित्रकला में दीप स्तम्भ की तरह है।''[13] महराणा प्रताप के समय चांवड़ मेवाड़ की दूसरी राजधानी थी और महाराणा अमर सिंह के समय 1605 ई0 चित्रित इस रागमाला के अनेक चित्र यत्र तत्र उपलब्ध हैं, जिनमें सर्वाधिक श्री गोपीकृष्ण कनोड़िया के निजी संग्रह में उपलब्ध हैं, जिनमें मारू रागिनी तिथियुक्त 1605 ई0 का यह महत्वपूर्ण लघुचित्र है।''[14] इसके अतिरिक्त राजस्थानी शैली में सर्वाधिक रागमाला चित्र बूँदी शैली में प्राप्त होता है।

भारत कला भवन, वाराणसी में राग दीपक, रागिनी विलावल, कामोद एवं पठमंजरी के चित्र, रागिनी भौरवी का नगरपालिका संग्रहालय, इलाहाबाद[15] में उपलब्ध यह चित्र कलागत सौन्दर्य को वर्णित करते हैं। रागमाला के अन्य चित्र विदेशों में स्टुअर्ट केरीवेल्च एवं जैम्स आइवरी संग्रह के क्रमशः रागिनी मालश्री, गौड़ तथा राग पंचम रागिनी खम्भावती आदि।''[16]

पहाड़ी शैली में चित्रकारों ने प्रकृति के सुरभ्य वातावरण में संगीत तथा भक्ति के नव विषयों का रूप निखार कर एवं प्रतीकों का आश्रय लेकर भावग्राही दृश्य निरूपण किया है। रागमाला के आरम्भक चित्र हमें बसोहली से प्राप्त होते हैं, रंग सोख और चटक होने के साथ ही अभिव्यक्ति में स्पष्ट व आर्कषक है। गुलेर शैली में चित्रित रागमाला में रेखायें कोमल लययुक्त, भंगिमाएँ और मुद्राएँ अति सुन्दर है। कांगड़ा शैली में रागमाला इन्द्रधनुषी रंग योजना, लयात्मक व भावात्मक रेखाओं से सृजित किया है। राजा संसार चन्द के समय में कांगड़ा शैली चरमोत्कष पर पहुंची उनके समय चित्रित रागमाला के 12 चित्रों का सेट जो फिर लम्बगाँव के राजा ध्रुवदेव चन्द्र के पास आ गया प्रत्येक में राधा कृष्ण के युगल के रूप में दिखाया गया है और उनके वस्त्र भी राग के अनुसार बदलते रहते है।''[17] चित्र में प्रकृति एवं ऋतुओं को भी रागों के अनुरूप वर्णित किया है। चित्रों में रंग संयोजना और विविध रूपाकारों को प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त किया है। पहाड़ी भौली में बसोहली, गुलेर व कांगड़ा में सर्वाधिक रागमाला चित्रण हुआ है। कांगड़ा के चित्रकारों ने लयात्मक रेखाओं, इन्द्रधनिषी वर्ण योजना द्वारा चित्रों को नयनाभिराम बना दिया है।

भारतीय चित्रकला में भाव को विशिष्ट महत्व दिया गया है। भावों के प्रदर्शन में रेखाओं रंगों और प्रतीकों का आश्रय लेकर, विषय को भावग्राही बनाया है। चित्रकारों ने रागों को मूर्त रूप देने में प्रकृति के विविध रूपाकारों को संयोजित कर विषय वस्तु को स्पष्ट करने में रेखाओं और आकर्षक रंगों के द्वारा कोमलतम, भावनाओं का प्रयोग किया है वह अद्वितीय है। रागों के अनुरूप सूर्योदय–सूर्यास्त, ऋतु, मेघ, वर्षा, वृक्ष, पुष्प, पशु–पक्षी आदि के निरूपण में लयात्मक रेखाओं एंव रमणीय रंग योजना से चित्र में सौन्दर्य की भावना का संचार हुआ है। भारतीय लघुचित्र शैली में चित्रकारों ने राग–रागिनियों के प्रदर्शन में परम्परागत शास्त्रीय एवं लोकनियमों के आधार पर विविध आश्रायों का सहारा लेकर बड़े ही एकाग्रता एवं भावुकता से चित्रों को हृदयग्राही बनाया है।

मध्यकालीन लघुचित्र परम्परा में रीतिकालीन काव्य एवं साहित्य का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। परन्तु रागमाला चित्रण में संगीत के व्यवहारिक और सैद्धान्तिक तर्कों को रेखाओं रंगों और प्रतीकों के द्वारा राग–रागिनियों को मूर्त रूप दिया है। ये तो सिर्फ भारतीय चित्रकार हैं, जिन्होंने श्रव्य को दृश्य के रूप में सृजित कर कला संसार को अचम्भित कर दिया।

सन्दर्भ :

(1) जैटली, डॉ0 अजय : काव्य–संगीत का मानवीय अनुभव, मध्योतरी कला संगम, भारद ऋतु अंक 3, 2011 उत्तर मध्य क्षेत्र, सांस्कृतिक केन्द्र, संस्कृति मंत्रालय, जनपथ भवन, जनपथ नई दिल्ली, पृष्ठ सं0 68. (2) शर्मा, डॉ0 महेन्द्र कुमार : राजस्थानी रागमाला चित्र परम्परा, पब्लिकेशन स्कीम, 53 मिश्रराजाजी का रास्ता, जयपुर, पृष्ठ सं0 27. (3) वही, पृष्ठ सं0 28. (4) जैटली, डॉ0 अजय : काव्य –संगीत का मानवीय अनुभव, मध्योतरी कला संगम, शरद ऋतु अंक 3, 2011 उत्तर मध्य क्षेत्र, सांस्कृतिक केन्द्र, संस्कृति मंत्रालय, जनपथ भवन, जनपथ नई दिल्ली, पृष्ठ सं0 68. (5) वही, पृष्ठ सं0 68. (6) सक्सेना, डॉ0 राकेश वाला : ब्रज के देवालय में संगीत परम्परा, संगीत कार्यालय, हाथरस, उत्तर प्रदेश, पृष्ठ सं0 9. (7) अग्रवाल, डॉ0 गिरीज किशोर : कला और कलम, अशोक प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ़, पृष्ठ सं0 133. (8) वही, पृष्ठ सं0 133. (9) साखलकर, आर0 बी0 : कला–कोश, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, पृष्ठ सं0 217. (10) जैटली, अजय, वही, पृष्ठ सं0 69. (11) जैटली, अजय, वही, पृष्ठ सं0 69. (12) शर्मा, डॉ0 महेन्द्र कुमार : राजस्थानी रागमाला चित्र परम्परा, पब्लिकेशन स्कीम, 53 मिश्रा राजाजी का रास्ता, जयपुर, पृष्ठ सं0 267. (13) नीरज, जयसिंह : राजस्थानीय चित्रकला, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्लाट –1 झालाना सांस्थानिक क्षेत्र, जयपुर, पृष्ठ 28. (14) नीरज, जयसिंह, वही, पृष्ठ 28. (15) नीरज, जयसिंह, वही, पृष्ठ 62. (16) नीरज, जयसिंह, वही, पृष्ठ 62. (17) सक्सेना, सुनील कुमार : कांगड़ा की चित्रकला में श्रृंगार, कला प्रकाशन बी0 33/33–ए–1, न्यू साकेत कालोनी, बी0 एच0 यू0 वाराणसी, पृष्ठ 88.

❁❁